राजनीतिक विकल्पहीनता का 'संकट' ये दौर आखिर कब तक?

-मनोज कुमार झा

वर्तमान व्यवस्था का संकट इस कदर गहरा चुका है कि अब देश में निर्वैकल्पिक राजनीतिक स्थितियां निर्मित होती जा रही हैं। एक ऐसा दौर शुरू हो चुका है, जहां सत्ताधारी ताक़तों को कोई चुनौती मिलती दिखाई नहीं पड़ रही है। ऐसी स्थिति कोई अचानक नहीं बनी है, बल्कि यह एक लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। अंग्रेजों से सत्ता हाथ में आने के बाद पूंजीपतियों की सत्ता का कोई विकल्प उभर कर सामने नहीं आ सका। जवाहरलाल नेहरू के रूप में पूंजीपतियों को एक ऐसा नेता मिल गया था, जो समाजवादी मुलम्मे के साथ समय-समय पर उभरने वाले जनअसंतोष को शांत कर पाने में सक्षम था। तथाकथित वामपंथियों का उन्हें पूर्ण समर्थन हासिल था। वाम के समर्थन से नेहरू और बाद में इंदिरा गांधी को भी काफ़ी फ़ायदा हुआ।

लेकिन इसका बहुत बड़ा नुकसान भारत की आम जनता-मज़दूरों-किसानों को हुआ, जिनकी हैसियत आज कुछ भी नहीं रह गई है। उन्हें निरंतर वंचना का शिकार होना पड़ रहा है। भारतीय वामपंथियों के सहयोग से ही नेहरू अपना वंशवादी शासन देश पर थोपने में सफल हो सके, वहीं वामपंथी भी पूंजीपतियों के दुमछल्ले बन कर सत्ता की जूठन चाटते रहे। बाद में चंद राज्यों की सत्ता पर दखल कर लूट तंत्र को आगे बढ़ाने में उन्होंने भी उल्लेखनीय भूमिका निभाई।

लेकिन अब देश का शासन उग्र भगवा संगठन आरएसएस के हाथ में है और विकल्प की गैरमौजूदगी ने इसे एकछत्र राज करने का मौका दे दिया है। अब तो कांग्रेस का भी सफ़ाया हो चुका है, वामदल तो पहले ही अप्रासांगिक हो चुके थे, अब तो कोई पूछने वाला नहीं, वहीं नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने यानी सीधे सत्ता तंत्र भगवा संगठन आरएसएस के हाथ में आ जाने से तथाकथित मध्यमार्गी राजनीतिक दलों के अस्तित्व पर भी संकट दिखाई पड़ रहा है। भूलना नहीं होगा कि ये मध्यमार्गी क्षेत्रीय दल साम्प्रदायिकता विरोध के नाम पर जातिवाद की बैसाखी के सहारे बिहार, पश्चिम बंगाल, यूपी, ओडिशा जैसे राज्यों की सत्ता पर काबिज़ हैं। लेकिन अब मोदी लहर के खत्म हो जाने के बाद भी इनके लिये संकट कम नहीं हुआ है। इस वर्ष के अंत में बिहार और आगे यूपी के चुनावों में दिखाई पड़ेगा कि इन तथाकथित सेक्युलरों का हाल क्या होता है। खास बात यह भी है कि अभी हाल ही में हुए दिल्ली विधानसभा चुनाव में मोदी लहर की हवा पूरी तरह निकल गई और अरविंद केजरीवाल के नेतृत्व में आम आदमी पार्टी को बंपर बहुमत मिला, लेकिन कुछ ही दिनों में इस पार्टी से भी लोग़ों का मोहभंग शुरू हो गया। जबकि वामपंथियों समेत भाजपा विरोधी तमाम दलों और क्षत्रपों ने आम आदमी पार्टी का समर्थन दिया था। इसकी वजह ये थी कि वे स्वतंत्र रूप से मोदी का मुकाबला कर पाने में ख़ुद को अक्षम पा रहे थे। इनकी यह अक्षमता आनेवाले दिनों में और भी उभर कर सामने आएगी, जब बिहार और यूपी विधानसभाओं के चुनाव होंगे। विकल्पहीनता के शून्य में जनता किसका चुनाव करेगी, यह तो आनेवाला समय बताएगा, पर इतना तय है कि जनता को अब किसी भी दल से कोई उम्मीद नहीं रह गई है।

ऐसे में, भगवा का मजबूत होकर उभरना तय है। इसकी वजह ये है कि अगर विकल्पहीनता का शून्य नहीं होता तो भगवा हर्गिज केन्द्र की सत्ता पर काबिज़ नहीं हो पाता। भ्रष्ट कांग्रेस, भ्रष्ट वाम, भ्रष्ट क्षेत्रीय दलों ने अपने कुशासन से जनता को इस कदर त्रस्त किया कि मोदी के झूठे वायदों पर उसने आंख मूंद कर यकीन कर लिया। अब स्थिति विकट है। न निगलते बने न उगलते। यह भगवा ताकतों के लिए स्वर्णकाल है। अब आरएसएस नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में अपने एजेंडे को लागू करवाने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र है। यह दिखाई भी पड़ रहा है । तमाम आलोचनाओं के बावजूद भगवा मंडली यानी संघ परिवार के संत-महंत और साध्वियां ज़हरबुझे बयान देने से बाज़ नहीं आ रहे हैं। रोज ही नई-नई साध्वियां आ रही हैं और उलटे-सीधे बयान देकर साम्प्रदायिक भावनाओं को भड़काने की कोशिश कर रही हैं। अल्पसंख्यक समुदाय के लोग़ों को डराया-धमकाया जा रहा है, उन्हें धर्म परिवर्तन पर मजबूर किया जा रहा है।

जहां भी भाजपा सत्ता में आई है, वहां संघ पृष्ठभूमि के लोगों को ही मुख्यमंत्री बनाया गया है। ये भी कोशिश रही कि राज्यपाल भी संघ का ही हो। यूपी के राज्यपाल ने खुल कर अयोध्या में राममंदिर बनाए जाने का खुला समर्थन किया और भूल गए कि वे एक संवैधानिक पद पर हैं। वहीं, सुब्रमण्यम स्वामी ने मस्जिद को कोई आराधना स्थल मानने से ही इनकार कर दिया और कहा कि कोई मस्जिद कभी भी तोड़ी जा सकती है। जाहिर है, इन्हें किसी तरह का कोई डर नहीं है। यद्यपि मोदी ने कहा था कि किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय की धार्मिक स्वतंत्रता बाधित नहीं होगी और ग़लत बयानबाज़ी करने वालों को बख्शा नहीं जाएगा। पर यह सिर्फ कहने की बात थी। मसला ये था कि अपने आप को दुनिया का दादा समझने वाले ओबामा ने परोक्ष तौर पर मोदी की साम्प्रदायिक नीतियों पर सवाल खड़ा कर दिया था और एक अमेरिकी अख़बार ने भी मोदी की आलोचना इसी मुद्दे पर कर दी थी। इसलिए अपने आका के सामने मोदी जी के लिए सफ़ाई देना जरूरी हो गया था। बाकी भेड़िया वही है, खाल किसी की ओढ ले।

इसी बीच, हरियाणा में जहां एक संघी मुख्यमंत्री की कुर्सी पर बैठा हुआ है, निर्माणाधीन चर्च पर हमला हुआ और तोड़फोड़ हुई। पश्चिम बंगाल के नाडिया में एक 72 वर्षिय नन के साथ नृशंस गैंगरेप हुआ। कहने की जरूरत नहीं, इन साजिशाना गतिविधियों के पीछे किनका हाथ है। पूरे देश में संघ और संघ परिवार के संगठनों ने आतंक का माहौल बना रखा है, वहीं इनके विरुद्ध किसी तरह की आवाज़ सुनाई नहीं पड़ती।

जहां तक आम आदमी पार्टी के विकल्प के तौर पर उभरने का सवाल है, सत्ता में आए जुमा-जुमा आठ रोज भी नहीं हुए कि नेतृत्व के वर्चस्व का संघर्ष पार्टी में सतह पर आ गया। आम आदमी के नेता अरविंद केजरीवाल को खास आदमी बनते जरा भी देर न लगी। वे अपने साथियों तक से मिलने से कतराने लगे। उनके इर्द-गिर्द चंद महत्वांकांक्षी लोग़ों का घेरा बन गया, जिसमें कोई मंत्री पद का आकांक्षी है तो कोई राज्यसभा में जाना चाहता है। एक भांड है कवि कुमार विश्वास जो दरअसल संघ का आदमी है, लेकिन वह अरविंद केजरीवाल का सबसे खास है। ऐसे में, इस आम आदमी पार्टी पर भी आम जनता क्या भरोसा कर सकती है, जो 'इंसान का इंसान से हो भाईचारा' यह पैगाम देकर सत्ता में आई है । शुरू से ही परमुखापेक्षी लेफ्ट अब आम आदमी पार्टी के साथ हो लिया, साथ ही अलग से मोर्चा भी बना रहा है। कोई इन आप नेताओं और वामपंथियों से पूछे कि इंसान से इंसान का भाईचारा कैसे हो सकता है, जब कुछ तो लुटेरे हों और बाकी जनता लूटी-पीटी जा रही हो। आखिर, आम आदमी पार्टी किस तरह की व्यवस्था बनाना चाहती है? जाहिर है, उसके वश का कुछ नहीं। वह बनी-बनाई व्यवस्था में ही कुछ सुधार कर अपनी खास छवि पेश करना चाहती है, पर यह संभव नहीं। जनता को आखिर कब तक बरगलाया जा सकता है? यह सच है कि वर्तमान हालात में आम जनता, बद और बद्तर में से बद का चुनाव कर लेती है, पर इससे व्यवस्था का संकट कम तो नहीं हो सकता। भगवा सुनामी के बाद आम आदमी पार्टी का नाटकीय उभार वर्तमान व्यवस्था के गहराते संकट का ही संकेत करता है, जहां कभी खलनायक तो कभी विदूषक नायक के रूप में आपने आप को पेश करने की कोशिश करते हैं। अंतत: यह स्थिति समाज को अराजकता के भंवर में ही डाल देगी।

भूलना नहीं होगा कि वर्तमान दौर में पूरी दुनिया में प्रतिक्रांतिकारी तत्वों का वर्चस्व है। पूंजीवादी व्यवस्था ने पूरी दुनिया को संकट में डाल रखा है, लेकिन इसका कोई विकल्प दिखाई नहीं पड़ रहा है। जहां-तहां विकल्प के रूप में जमूरे सामने आ रहे हैं। जहां तक धार्मिक कट्टरतावाद का सवाल है, यह भी पूरी दुनिया के पैमाने पर बढ़ता ही चला जा रहा है और नकली ही सही, लोकतंत्र के लिये जबरदस्त चुनौती पेश कर रहा है।

विश्व स्तर पर मुस्लिम आतंकी संगठन आइएसआइएस का उभार यही दिखलाता है। यह भी ओसामा बिन लादेन की तरह अमेरिकी उत्पाद है, जो एक तरह से साम्राज्यवादी व्यवस्था को कायम रखने के लिए, लूट और दमन के तंत्र को बनाए रखने के लिए काम कर रहा है। अमेरिका और पश्चिमी शक्तियां यह दिखावा कर रही हैं कि वे आइएसआइएस का खात्मा करेंगी, पर ऐसा है नहीं। साम्राज्यवाद का वर्चस्व कायम रहे, इसलिए यह जरूरी है कि दुनिया के पैमाने पर और अलग-अलग देशों में धार्मिक कट्टरतावाद को बढ़ावा मिलता रहे। इसलिए अमेरिका और अन्य साम्राज्यवादी देश आइएसआइएस के स्वाभाविक सहयोगी हैं, वे भी मोदी के समर्थक हैं, क्योंकि मोदी उनके हित के लिये अपने देश के गरीब किसानों की ज़मीनें छीनने के लिये तैयार है और विदेशी पूंजीपतियों को ठेके पर सस्ता श्रम भी मुहैया कराएगा। बाज़ार को तो उसने खोल ही रखा है। कांग्रेस यही काम करा रही थी, पर कुछ हिचक के साथ और धीमी गति से। साथ ही, उसके भ्रष्टाचार से जनता में भारी असंतोष भी पनप चुका था। नहीं तो कांग्रेस भी उसके लिए बुरी नहीं थी। पर अब मोदी के रूप में देशी-विदेशी पूंजीपतियों को एक सच्चा और वफ़ादार सेवक मिल चुका है। और अभी इसका जलवा कायम रहेगा। सुधार के पैबंद लगा कर वर्तमान सड़ी-गली व्यवस्था को आखिर कब तक चलाया जा सकता है। यही कारण है कि सुधार के स्वयंभू मसीहा अरविंद केजरीवाल ने भी भ्रष्टाचार के मुद्दे पर चुप्पी साध ली है। दरअसल, इनके वश का कुछ है भी नहीं। न ही तथाकथित मध्यमार्गी और लेफ्ट ही कुछ करने लायक रह गया। कांग्रेस का अस्तित्व खत्म होने पर है। ऐसे में, प्रतिक्रिया के एक लंबे दौर के लिए जनता को तैयार रहना होगा।

खास बात यह भी है कि अभी हाल ही में हुए दिल्ली विधानसभा चुनाव में मोदी लहर की हवा पूरी तरह निकल गई और अरविंद केजरीवाल के नेतृत्व में आम आदमी पार्टी को बंपर बहुमत मिला, लेकिन कुछ ही दिनों में इस पार्टी से भी लोग़ों का मोहभंग शुरू हो गया। जबकि वामपंथियों समेत भाजपा विरोधी तमाम दलों और क्षत्रपों ने आम आदमी पार्टी का समर्थन दिया था। इसकी वजह ये थी कि वे स्वतंत्र रूप से मोदी का मुकाबला कर पाने में ख़ुद को अक्षम पा रहे थे। इनकी यह अक्षमता आनेवाले दिनों में और भी उभर कर सामने आएगी, जब बिहार और यूपी विधानसभाओं के चुनाव होंगे। विकल्पहीनता के शून्य में जनता किसका चुनाव करेगी, यह तो आनेवाला समय बताएगा, पर इतना तय है कि जनता को अब किसी भी दल से कोई उम्मीद नहीं रह गई है।

'आप' की हालत भी जनता पार्टी व जनता दल जैसी होगी?

-प्रो.जुगल किशोर गुप्ता

अण्णा हज़ारे के जन लोकपाल बिल और भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन की देन आम आदमी पार्टी ('आप') है। इस आंदोलन को अण्णा हज़ारे के चेहरे को आगे रखकर चलाया गया जबकि इसका वास्तविक नेतृत्व व नियंत्रण भारतीय राजस्व सेवा के भूतपूर्व अधिकारी तथा सोशल एक्टिविस्ट अरविंद केजरीवाल और उनकी एनजीओ के हाथ में था। विभिन्न परस्पर विरोधी विचारधारा के लोग भी इस आंदोलन में शामिल हो गए थे।

भाजपा व आर एस एस के व्यक्ति भी अण्णा के मंच पर दिखाई देते थे। बाद में इस आंदोलन से जुड़े एक तबके ने केजरीवाल के नेतृत्व में व्यवस्था में सुधार करने व बुरी राजनीति को समाप्त करने और अच्छी राजनीति करने के लिये राजनीति व चुनावों में भाग लेने का निर्णय किया। जनता ने केजरीवाल के इस कदम का स्वागत किया और देश का प्रबुद्ध वर्ग बड़ी आशा के साथ इससे जुड़ता चला गया। परंतु केजरीवाल के गुरू अण्णा हज़ारे और आंदोलन के सहयोगी संतोष हेगड़े, किरण बेदी आदि राजनीति में आने के विरोधी थे इसलिए वे केजरीवाल के साथ नहीं आए।

केजरीवाल ने जनता से जुड़े रहने के लिए अपनी पार्टी का नाम आम आदमी पार्टी रखा। इस पार्टी के प्रमुख सिद्धांत थे-पारदर्षिता,जवाबदेही, निर्णय लेने में आन्तरिक लोकतंत्र, स्वराज आदि। सबको आशा बंधी कि देश में मौजूद राजनीतिक दलों के मुकाबले में 'आप' एक नई राजनीतिक संस्कृति की शुरूआत करेगी। केजरीवाल ने घोषणा की कि उनकी पार्टी की कोई राजनीतिक विचारधारा नहीं होगी, वे व्यावहारिक राजनीति अर्थात, मुद्दों की राजनीति करेंगे। इसी कारण नरेन्द्र मोदी, संघ परिवार व हिंदू राष्ट्रवादियों तथा साम्प्रदायिकता के विरुद्ध 'आप' की कोई आवाज सुनाई नहीं दी और ना ही वामपंथी विचारधारा के प्रति अपना रूख स्पष्ट किया।

पार्टी जिन सिद्धांतों पर आधारित थी उनका उल्लंघन होने लगा। इसमें केजरीवाल का व्यक्तित्व आड़े हाथ आया। केजरीवाल मूलत: एक भूतपूर्व प्रशासनिक अधिकारी है और प्रशासनिक अधिकारियों की प्रवृति होती है सर्वेसर्वा बनने की, अपनी इच्छा को दूसरों पर लादने की तथा प्रतिपक्षी विचार को कुचलने की। यही प्रवृत्ति अधिनायकवादी नेताओं में पाई जाती है जैसे इंदिरा गांधी, नरेन्द्र मोदी, औम प्रकाश चौटाला, मायावती आदि। इसके उदाहरण 'आप' के संक्षिप्त कार्यकाल में देखे जा सकते हैं। कहने को तो पार्टी का ढांचा स्थापित है जिसमें राष्ट्रीय परिषद्, राष्ट्रीय कार्यकारिणी तथा राजनीतिक मामलों की समिति। राष्ट्रीय परिषद् की बैठक केवल एक बार ही हुई है। राष्ट्रीय कार्यकारिणी के मुकाबले में राजनीतिक मामलों की समिति (पीएसी) ज्यादा शक्तिशाली है।

पीएसी व राष्ट्रीय कार्यकारिणी में प्रख्यात क़ानून विशेषज्ञ प्रशांत भूषण तथा प्रसिद्ध शिक्षाविद, चुनाव विश्लेषक व विचारक योगेन्द्र यादव हैं जो सैद्धांतिक व वैचारिक मुद्दे उठाते रहे हैं। उन्होंने केजरीवाल की कार्यशैली पर प्रश्न उठाने शुरू किये तो उन्हें पार्टी विरोधी और विद्रोही कहा जाने लगा। पार्टी चलाने की शैली व अन्य सैद्धांतिक मुद्दों को लेकर केजरीवाल के प्रशांत भूषण और योगेन्द्र यादव के साथ मतभेद हो गए। इस पर केजरीवाल उनकी उपस्थिति में अपने आप को असहज महसूस करने लगे। जब 26 फ़रवरी को राष्ट्रीय कार्यकारिणी के कुछ सदस्य (केजरीवाल के सिपहसालार) केजरीवाल से मिलने गए तो केजरीवाल ने उन्हें साफ़ कह दिया कि यदि प्रशांत और योगेन्द्र पीएसी के सदस्य रहेंगे तो वह संयोजक के रूप में काम नहीं कर पाएंगे। यहीं से 4 मार्च की पीएसी की मिटिंग की स्क्रिप्ट लिखी गई। हालांकि उस बैठक में योगेन्द्र और प्रशान्त दोनों स्वयं खुशी-खुशी पीएसी से बाहर जाने को तैयार थे। इसके बावजूद उन्हें पीएसी से बाहर निकालने का प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें मनीष सिसौदिया, संजय सिंह, आशुतोष, पंकज गुप्ता, गोपाल राय, नवीन जयहिंद आदि ने प्रमुख भूमिका निभाई। परंतु उनकी आशा के विपरीत पीएसी के 8 सदस्यों ने प्रशान्त व योगेन्द्र के समर्थन में प्रस्ताव का विरोध किया तो एक सदस्य मयंक गांधी इस प्रक्रिया के विरोध में वोटिंग से गैरहाजिर हो गए।

गौरतलब है कि केजरीवाल सचिवालय में उपस्थित होते हुए भी इस बैठक में शामिल नहीं हुए। नवीन जयहिंद के बारे में पाठकों को जानकारी देना जरूरी है कि वह योगेन्द्र यादव के घुर विरोधी है और पार्टी की हरियाणा इकाई के सर्वेसर्वा बनना चाहते हैं, जबकि उनका बौद्धिक स्तर बिल्कुल जीरो है। यह भी कहा जाता है कि नवीन जयहिंद रिश्ते में सिसौदिया के दामाद हैं। नवीन ने ही योगेन्द्र व प्रशान्त को पीएसी से हटाने का प्रस्ताव रखा परंतु इस प्रस्ताव पर कार्यवाही नहीं हुई। कुछ अंतराल के बाद हुई पीएसी की मीटिंग में सिसौदिया ने योगेन्द्र व प्रशान्त को पीएसी से बाहर निकालने का प्रस्ताव रखा जिसका संजय सिंह ने समर्थन किया।

हैरानी की बात है कि जब प्रशान्त व योगेन्द्र दोनों खुद ही पीएसी से बाहर जाने को तैयार थे तो यह प्रस्ताव पारित करने की क्या आवश्यकता थी। शायद ही प्रशान्त और योगेन्द्र को जलील करना चाहते थे। इसके बाद तो दोनों धड़ों के समर्थकों के बीच एक दूसरे आरोप-प्रत्यारोप लगाने का दौर शुरू हो गया और कई स्टिंग सीडी सामने आ गई जिनमें प्रमुखतया केजरीवाल की करनी व कथनी में अंतर तथा उनका दोगलापन उज़ागर हो गया।

सत्ता के लिये जोड़-तोड़ करके दिल्ली में सरकार बनाने के ऑडियो टेप ने केजरीवाल को पूरी तरह बेनकाब कर दिया। इन घटनाओं से आपके समर्थक व शुभचिंतक आश्चर्यचकित व निराश हैं, उनका आप से मोहभंग हो गया है। रही सही कसर 27 मार्च को सामने आये एक अन्य ऑडियो टेप ने पूरी कर दी। इस टेप में वाराणसी के उमेश द्वारा 22 मार्च को केजरीवाल से टेलीफ़ोन पर की गई वार्ता का विवरण है। उमेश सिंह बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्र नेता रह चुके हैं और गत लोकसभा चुनाव में केजरीवाल के प्रमुख सिपहसालारों में से एक हैं। इस टेप ने केजरीवाल को बिल्कुल नंगा करके उनका असली चरित्र जनता के सामने प्रस्तुत कर दिया है। इन हालात में जनता यह मानने को विवश है कि आप व अन्य पार्टियों में कोई अंतर नहीं है। इससे आशंका है कि कहीं आप का भी वही हाल न हो जाए जो पीछे जनता पार्टी व जनता दल का हुआ है।